

श्रीअयोध्या स्थित श्रीअरविन्द साधनालय
व श्रीरामजन्मभूमि तीर्थ क्षेत्र



Sri Arvind Sadhanalaya
at Sri Ayodhya and
Sri Ram Janmabhoomi Teerth Kshetra

श्रीअयोध्या स्थित श्रीअरविन्द,
साधनालय व श्रीरामजन्भूमि तीर्थ क्षेत्र

Sri Arvind Sadhanalaya
at Sri Ayodhya and
Sri Ram Janmabhoomi Teerth
Kshetra

Contents

श्रीअयोध्या स्थित श्रीअरविन्द साधनालय व श्रीरामजन्मूमि तीर्थ क्षेत्र	3
अयोध्या में श्रीअरविन्द साधनालय और बाबाजी श्री रामकृष्ण दासजी महाराज	14
Sri Arvind Sadhanalaya at Sri Ayodhya and Sri Ram Janmabhoomi Teerth Kshetra	17
Sri Arvind Sadhanalaya at Ayodhya and Babaji Sri Ramkrushna Dasji Maharaj	29

Published by:-
Sri Aurobindo Divine Life Trust
Khetan Mohalla, Jhunjhunu - 333001
Rajasthan, India
email: sadlecjrn@gmail.com
URL: www.sadlec.org
www.resurgentindia.org
www.aurokart.com

All quotations from the Complete Works of Sri Aurobindo appearing in this book are copyright of Sri Aurobindo Ashram Trust, Pondicherry.

श्रीअयोध्या स्थित श्रीअरविन्द साधनालय व श्रीरामजन्मभूमि तीर्थ क्षेत्र

इस वर्ष भारत की स्वतंत्रता के अमृत महोत्सव के साथ ही साथ श्रीअरविन्द के जन्म की १५०वीं जयन्ती भी मनायी जा रही है। श्रीअरविन्द की इस जयन्ती के विषय में स्वयं सरकार की गंभीरता उसके द्वारा इसे मनाए जाने के लिए किये गए अभूतपूर्व प्रयासों और मनोयोग से स्पष्ट दिखायी देती है। सर्वप्रथम स्वयं प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी की अध्यक्षता वाली ५३ सदस्यीय उच्च स्तरीय समिति का गठन किया गया जिसके अंतर्गत देश-विदेश में अनेकानेक कार्यक्रमों का आयोजन किया गया और अब भी किया जा रहा है। इस क्रम में २६ जनवरी २०२२ को गणतंत्र दिवस परेड में स्वयं संस्कृति मंत्रालय द्वारा श्रीअरविन्द की झाँकी प्रस्तुत की गई। १५०वीं जयन्ती के उपलक्ष्य में गत वर्ष एक स्मारक डाक-टिकट तथा १५० रुपये के एक स्मारक सिक्के का विमोचन स्वयं प्रधानमंत्री मोदी द्वारा किया गया। इसी अवसर पर श्रीअरविन्द व श्रीमाताजी के संपूर्ण साहित्य के ३ खंडीय संकलन सेट तथा 'भारतीय संस्कृति और सनातन धर्म की महानता' शीर्षक से एक अतिरिक्त पुस्तक का निःशुल्क वितरण भारत सरकार के संस्कृति मंत्रालय द्वारा श्रीअरविन्द डिवाइन लाइफ ट्रस्ट, झुंझुनू के माध्यम से किया गया। इन सब कार्यों के अतिरिक्त भी अनेकानेक अन्य कार्यक्रमों, अपने भाषणों आदि के माध्यम से प्रधानमंत्री, गृहमंत्री व संस्कृति मंत्रालय का इस पर विशेष बल रहा है कि श्रीअरविन्द के दर्शन का व्यापक प्रचार-प्रसार किया जाए। यह एक अकाट्य तथ्य है कि श्रीअरविन्द को बिना समझे भारत व उसकी आत्मा तथा उसके भूत, भविष्य व वर्तमान के कार्य को कभी भली-भाँति नहीं समझा जा सकता है। यह विषय श्रीअरविन्द के जन्म की शताब्दी के अवसर पर श्रीमाताजी के निम्नांकित शब्दों से हमें बिल्कुल स्पष्ट हो जाता है।

“(१९७२ में, श्रीअरविन्द की) यह शताब्दी 'उद्देश्यपूर्ण रूप से' आई है। यह अवश्य ही कुछ ऐसा है जो अब आ रहा है क्योंकि देश के लिए 'एकमात्र' मुक्ति, 'एकमात्र' वह चीज जो इसे एकजुट कर सकती है, वह है देश के लिए श्रीअरविन्द के आदर्श को अपनाना – उनके पास एक योजना थी, उन्होंने

बड़ी स्पष्टता से देख लिया था कि देश को कैसे व्यवस्थित किया जाना चाहिए, उन्होंने यह मुझसे कहा था। यदि कोई उनकी पुस्तकों को गंभीरता से पढ़ता है तो यह चीज उनमें विद्यमान है, व्यक्ति इसे देख सकता है। इसीलिए मैंने कहा कि इस प्रकार की व्यवस्था की जानी चाहिये कि 'संपूर्ण' भारत में अध्ययन समूह, पुस्तकालय, व्याख्यान, जो भी हो सके वह सब कुछ हो, ताकि पूरा देश श्रीअरविन्द के विचार और उनके संकल्प को जान जाए। और शताब्दी एक अत्युत्तम अवसर है। ...इस शताब्दी की व्यवस्था अभी तुरंत, एकाएक ही, इस प्रकार की जानी चाहिये कि वह इस शताब्दी के अवसर पर पूरे देश में फैली हो...और श्रीअरविन्द ने जो कुछ लिखा है उसमें वे वह सब कुछ पाएँगे जो देश को सुव्यवस्थित करने के लिए आवश्यक है।” (Mother’s Agenda, Vol. 11, pg. 207)

श्रीमाँ के अनुसार, श्रीअरविन्द, जो विश्व के लिए एक दिव्य भविष्य का आश्वासन लाये हैं, “जगत् के इतिहास में जिस चीज का प्रतिनिधित्व करते हैं वह कोई शिक्षा नहीं है, कोई अन्तःप्रकाश भी नहीं है; वह तो परम प्रभु से आई एक निर्णायक क्रिया है।” CWM, Vol 13, pg. 4)

श्रीअरविन्द के विषय में इस उद्धरण के प्रकाश में हम कह सकते हैं कि श्रीअरविन्द व उनका कार्य वास्तव में सर्वसमावेशी – अर्थात् सभी पदार्थों, जीवों, मनुष्यों, जातियों, धर्मों, संप्रदायों, भावनाओं और विचारों को समाहित किये हुए – होते हुए भी इनमें से किसी के द्वारा भी सीमित नहीं किया जा सकता है। श्रीअरविन्द के शब्दों में, “विभिन्न दर्शन और धर्म भगवान् के विभिन्न पहलुओं की वरीयता के बारे में विवाद करते हैं और विभिन्न योगियों, ऋषियों और संतों ने इस या उस दर्शन या धर्म को वरीयता दी है। हमारा कार्य उनमें से किसी के बारे में विवाद करना नहीं है, अपितु उन सभी को अनुभूत करना और वे सभी बन जाना है, बाकी सभी को छोड़कर किसी एक पहलू का अनन्यता में अनुसरण करना नहीं है, अपितु भगवान् को उनके सभी पहलुओं और पहलुओं से परे अंगीकार करना है।” (CWSA 12, pg. 99)

यही बात श्रीमाताजी की १९६५ की घोषणा से एकदम स्पष्ट हो जाती है, “यह कहने के बाद हमारी स्थिति स्पष्ट है।

हम किसी मत के, किसी धर्म के विरुद्ध नहीं लड़ते।
हम सरकार के किसी रूप के विरुद्ध नहीं लड़ते।
हम किसी सामाजिक वर्ग के विरुद्ध नहीं लड़ते।
हम किसी राष्ट्र या सभ्यता के विरुद्ध नहीं लड़ते।
हम विभाजन, अचेतनता, अज्ञान, तमस् और मिथ्यात्व के विरुद्ध लड़ रहे हैं।

हम धरती पर एकता, ज्ञान, चेतना, 'सत्य' को प्रतिष्ठित करने का उद्यम कर रहे हैं, और जो कुछ 'प्रकाश', 'सत्य' और 'प्रेम' की इस नयी सृष्टि का विरोध करता है हम उसके विरुद्ध लड़ते हैं।" (CWM, Vol 13, page 124-25)

वर्ष १९८९ में श्रीअयोध्या में तत्कालीन उत्तर प्रदेश सरकार व मुख्य मंत्री ने गर्मजोशी के साथ श्रीअरविन्द के दिव्य देहांशों का स्वागत किया जब वहाँ स्थित श्रीअरविन्द साधनालय में बाबाजी श्रीरामकृष्ण दासजी द्वारा उनकी स्थापना की गई थी। उक्त साधनालय पर श्रीमाताजी की कृपा तथा भगवान् श्रीराम की स्वीकृति की मुहर का एक स्पष्ट प्रमाण यह भी है कि १९९२ की घटनाओं के बाद जब कि केन्द्रीय सरकार द्वारा श्रीराम मन्दिर के आसपास की सभी सम्पत्तियों का अधिग्रहण कर लिया गया था तब भी तत्कालीन नरसिम्हाराव सरकार द्वारा इसे यथावत रहने दिया गया था। श्रीअरविन्द के दिव्य देहांशों के बारे में उनके एक अंतरंग शिष्य डा. नीरोदबरन लिखते हैं: "हमने देखा है कि वे (श्रीमाँ) इसे कितना महत्त्व देती हैं ... उन्होंने कहा है कि श्रीअरविन्द के शरीर का प्रत्येक अणु अतिमानसिक चेतना से भरा था। हम जानते हैं कि जैसे ही उन्होंने उसे छोड़ा उनका शरीर अतिमानसिक प्रकाश से दमक रहा था। वह चेतना कोई नश्वर वस्तु नहीं है जो भौतिक शरीर की मृत्यु के साथ समाप्त हो जाती है। यदि ऐसा होता, तो समाधि को स्पर्श करने पर हमें ऐसी असाधारण शक्ति और सामर्थ्य का अनुभव नहीं होता।

हमने उस शांति और नीरवता को देखा है जहाँ अवशेष स्थापित हैं। इसलिए, देहांश केवल स्मृति चिन्ह नहीं हैं। देहांश श्रीअरविन्द की जीवंत उपस्थिति हैं, जो उनकी आजीवन साधना के प्रकाश और शक्ति से ओत-प्रोत हैं, जैसे एक परमाणु अपने आप में एक अनंत शक्ति रखता है – यह देहांश के

पीछे की सच्चाई है। उस सत्य को हमेशा जीवित रखना और उसे उचित सम्मान देना यही देहांश हमसे माँग करते हैं।” (नीरोदबरन, डिविनिटीज कॉमरेड, रेलिक्स, पृ. २१६-१७)

यह कैसी घोर विडम्बना है कि भारत की स्वतंत्रता – जो भगवान् श्री कृष्ण ने श्रीअरविन्द से किये अपने वादे के अनुरूप उनके जन्मदिन १५ अगस्त पर ही प्रदान की – की ७५वीं वर्षगाँठ पर भारत सरकार द्वारा मनाये जा रहे अमृत महोत्सव व श्रीअरविन्द की १५०वीं जयंती के अवसर पर ही उसी सरकार द्वारा गठित श्रीरामजन्मभूमि तीर्थ क्षेत्र अयोध्या के पदाधिकारियों द्वारा वहाँ स्थित श्रीअरविन्द साधनालय और वहाँ स्थापित श्रीअरविन्द के दिव्य देहांशों को हटाने का प्रयास किया जा रहा है जो इस प्रकार श्रीअरविन्द के प्रति अवमानना प्रदर्शित कर उनके अनगिनत भक्तगणों के हृदयों को पीड़ित कर रहा है।

श्रीअरविन्द के भक्तगण विश्वास करना चाहेंगे कि ऐसे प्रयासों का उद्गम कोई बुरी भावना से न होकर माल संकुचितता व श्रीअरविन्द व उनके दिव्य कार्य के संबंध में सच्ची समझ का अभाव ही है। अतः श्रीअरविन्द व उनके दिव्य संदेश व कार्य के बारे में यहाँ कुछ निवेदन किया जाना आवश्यक प्रतीत होता है।

श्रीअरविन्द ने मनुष्यजाति के लिए दिव्य जीवन का संदेश दिया है। उनके अनुसार धरती पर दिव्य जीवन का अवतरण अवश्यभावी है और पृथ्वी पर मृत्यु व अज्ञान का अन्त होगा। ऐसा अतिमानसिक चेतना के धरती पर अवतरण व पूर्ण विकास द्वारा साधित किया जाएगा। मनुष्य पृथ्वी पर भगवान् की अभिव्यक्ति का आखिरी चरण नहीं है। इस अभिव्यक्ति का अगला चरण होगा अतिमानव या दिव्य मानव जिसकी चेतना भागवत चेतना से ऐक्य के कारण (अपनी सीमा में) उसकी सर्वशक्तिमत्ता, सर्वविज्ञता और सर्वव्यापकता को अभिव्यक्त करेगी। अतिमानव मनुष्य के लिए वैसा ही होगा जैसा मनुष्य पशु के लिए है। परंतु जहाँ पशु अपने किसी भी प्रयत्न द्वारा मनुष्य की चेतना को प्राप्त नहीं कर सकता है, मनुष्य के लिए यह संभव है कि वह भागवत कृपा से समाहित होकर स्वयं अतिमानसिक चेतना प्राप्त कर ले। ऐसा स्पष्ट

बोध न होते हुए भी, श्रीअरविन्द के अनुसार, मनुष्य के सारे आध्यात्मिक प्रयासों (तपस्या, योग, साधना) के पीछे यही रहस्य रहा है। इन्हीं प्रयत्नों की पराकाष्ठा है अतिमानसिक चेतना। हमारे ऋषियों एवं अवतारों का वास्तविक कार्य यही रहा है। श्रीअरविन्द के अनुसार श्रीकृष्ण ने अधिमानसिक चेतना – जो अतिमानसिक चेतना से एक स्तर नीचे है परंतु मानसिक चेतना का सर्वोच्च शिखर है – का प्रयोग अपने अवतारिक जीवन व लीलाओं में किया था। जैसा कि हम आगे चलकर देखेंगे कि इन्हीं भगवान् श्रीकृष्ण (जो कि परम प्रभु के स्थायी अवतार हैं) की प्रेरणा से श्रीअरविन्द स्वतंत्रता आंदोलन से हटकर अतिमानसिक साधना हेतु पांडिचेरी चले गये थे। उनके पांडिचेरी प्रवास में १६ वर्ष की साधनोपरान्त उनके भौतिक शरीर में श्रीकृष्ण का अवतरण, श्रीमाँ के द्वारा श्रीकृष्ण से अनुरोध किये जाने पर, २४ नवंबर १९२६ को हुआ। यही दिन सिद्धि दिवस के रूप में प्रसिद्ध है व इसे ही श्रीअरविन्द आश्रम पांडिचेरी की स्थापना के दिवस के रूप में भी मनाया जाता है क्योंकि इसी दिन से श्रीअरविन्द (श्रीकृष्ण से संयुक्त होकर) अतिमानसिक चेतना के धरती पर अवतरण हेतु कठोर साधना में लग गये थे व श्रीमाँ ने आश्रम की सारी व्यवस्था संभाल ली थी। श्रीमाँ व श्रीअरविन्द के अथक प्रयत्नों से २९ फरवरी १९५६ को पृथ्वी की सूक्ष्म भौतिक चेतना में अतिमानसिक चेतना का अवतरण साधित हुआ, जो कि अतिमानसिक जगत् के अवतरण का पहला चरण था।

श्रीअरविन्द ने हमें बतलाया है कि अतिमानसिक अवतरण से पूर्व ही मनुष्यजाति नष्ट न हो जाये इसके लिए मनुष्यजाति की एकता व अंततोगत्वा एक विश्व सरकार का गठन आवश्यक है व भारत को तथा उसके सनातन धर्म को इस कार्य में अपनी महती भूमिका निभानी है। श्रीअरविन्द के अनुसार यदि भारत अपनी महान आध्यात्मिकता व सांस्कृतिक विरासत खोकर पश्चिम की नकल करेगा तो न केवल भारत बल्कि उसके साथ ही साथ सारा विश्व भी नष्ट हो जाएगा। अतः बंदे मातरम्, कर्मयोगी व आर्य में लिखे गए अपने लेखों में उन्होंने भारतीयों को भारत के गौरवशाली अतीत का दर्शन कराया व (वर्तमान की कठिनाइयों के बावजूद) एक अत्यंत सुंदर भविष्य की सुनिश्चितता का आश्वासन दिया। यही नहीं वेद, उपनिषद्, गीता, भारतीय धर्म, संस्कृति, कला, राजनीति पर अपने दस से अधिक ग्रंथों में उन्होंने इन

सब को अपने सच्चे उस उच्च स्तर पर पहुँचाया जहाँ से विदेशियों, विधर्मियों, व देश में ही उनके अनुगामियों द्वारा हजार साल की दासता के दौरान नीचे गिरा दिया गया था। इतना सब कुछ एक शरीर के माध्यम से इसीलिए किया जा सका क्योंकि जैसा कि हम श्रीमाँ के शब्दों में पहले ही व्यक्त कर चुके हैं कि श्रीअरविंद ने अपने दिव्य जीवन व लीला में परम प्रभु की सीधी निर्णायक क्रिया को ही अभिव्यक्त किया है।

स्वतंत्रता आंदोलन में श्रीअरविंद का योगदान व कार्य जगजाहिर है। अब हम भारतीय संस्कृति, उसकी नियति व सनातन धर्म के सच्चे रहस्यों की झाँकी के लिए उनकी रचनाओं में से कुछ उद्धरण यहाँ प्रस्तुत करते हैं।

“यह जगत् मुक्त विचार और भौतिकवाद के अपरिहार्य अंतरालों से होते हुए धार्मिक विचार और अनुभव के एक नवीन समन्वय की ओर अग्रसर होता है, ऐसे समन्वय की ओर जिसमें विश्व का धार्मिक जीवन असहिष्णुता से मुक्त होते हुए भी आस्था और उत्साह से भरा होता है तथा धर्म के सभी रूपों को स्वीकार करता है क्योंकि एकमेव में उसकी अविचल आस्था होती है। एक ऐसा धर्म जो विज्ञान और विश्वास को, ईश्वरवाद, ईसाईयत, इस्लाम और बौद्ध धर्म को अपने में समेटते हुए भी इनमें से कोई-सा भी नहीं है, वही वह धर्म है जिसकी ओर विश्व-सत्ता अग्रसर होती है। हमारा अपना धर्म सब धर्मों से अधिक संशयशील और सर्वाधिक आस्तिक है, सर्वाधिक संशयशील इसलिए है क्योंकि इसने सबसे अधिक प्रश्न उठाए हैं और प्रयोग किए हैं, सर्वाधिक आस्तिक इसलिए है क्योंकि इसने गहनतम अनुभवों की तथा सर्वाधिक विविध और निश्चयात्मक आध्यात्मिक ज्ञान की उपलब्धि की है, – वह बृहत्तर हिंदुत्व जो एक मतवाद या मतवादों का समूह-माल नहीं है, अपितु जीवन का एक विधान है, जो एक सामाजिक ढाँचा नहीं, अपितु पूर्व और भावी विकास की आत्मा है, जो कि (यह बृहत्तर हिंदुत्व) किसी भी चीज को नकारता नहीं है अपितु हर चीज की जाँच-परख और अनुभूति करने का आग्रह रखता है और तदुपरान्त उस चीज को आत्मा के लिए उपयोगी बना लेता है, इसी हिंदुत्व में हम भावी विश्व-धर्म का आधार पाते हैं। इस सनातन धर्म के अनेक धर्मग्रंथ हैं, वेद, वेदांत, गीता, उपनिषद्, दर्शन, पुराण और तंत्र, और न यह बाइबल और कुरान को ही नकार सकती था, परंतु इसका सर्वाधिक प्रामाणिक शास्त्र

तो उस हृदय में स्थित है जिसमें शाश्वत का निवास स्थान है। हमारे आंतरिक आध्यात्मिक अनुभवों में ही हमें जगत् के सभी शास्त्रों का प्रमाण और स्रोत, हमारे ज्ञान, प्रेम और व्यवहार का विधान तथा हमारे कर्मयोग की प्रेरणा और आधार प्राप्त हो सकता है।” (CWSA 8, pg. 26)

अलीपुर जेल से छूटने के बाद दिये गए अपने उत्तरपाड़ा भाषण में श्रीअरविन्द कहते हैं, “मैं अब और अधिक यह नहीं कहता कि राष्ट्रवाद कोई सिद्धांत, धर्म या कोई मत-विश्वास है; मैं कहता हूँ यह सनातन धर्म ही है जो हमारे लिए राष्ट्रवाद है। इस हिंदू राष्ट्र का प्रादुर्भाव सनातन धर्म के साथ ही हुआ, उसके साथ ही यह आगे गति करता है और उसके साथ ही यह विकसित होता है। जब सनातन धर्म का हास (पतन) होता है तब राष्ट्र का भी पतन होता है और यदि सनातन धर्म नष्ट हो सकता हो तो सनातन धर्म के साथ ही यह भी नष्ट हो जाएगा। सनातन धर्म, यह ही राष्ट्रवाद है।” (CWSA 8: 12)

“बहुधा हम हिंदू धर्म, सनातन धर्म की बातें करते हैं, किंतु हममें से कम ही लोग वास्तव में यह जानते हैं कि वह धर्म है क्या। दूसरे धर्म मुख्य रूप से विश्वास और मान्यता पर आधारित हैं, किंतु सनातन धर्म तो स्वयं जीवन है, यह कोई विश्वास रखने की नहीं अपितु जीवन में उतारने की चीज है। यही वह धर्म है जिसका पोषण मानव-जाति के कल्याण के लिए प्राचीन काल से इस प्रायद्वीप के एकांत में होता आ रहा है। यही धर्म प्रदान करने के लिए भारत उदित हो रहा है। भारतवर्ष, दूसरे राष्ट्रों की भाँति, अपने लिए ही या शक्तिशाली होकर दूसरों को कुचलने के लिए नहीं उठ रहा। वह उदित हो रहा है सारे संसार पर उस सनातन ज्योति को फैलाने के लिए जो उसे सौंपी गई है। भारत अपने लिए नहीं अपितु सदैव ही मानव-जाति के लिए अस्तित्वमान रहा है, उसे अपने लिए नहीं अपितु मानवजाति के लिए महान् होना होगा।” (CWSA 8: 5-6)

“जब मैं भगवान् की ओर बढ़ा, उस समय, कदाचित् ही मुझे उनमें जीवंत श्रद्धा थी। मेरे अंदर संशयवादी था, अनीश्वरवादी था, संदेहवादी था और मुझे पूरी तरह विश्वास न था कि यत्किंचित् भगवान् हैं भी। मैं उनकी उपस्थिति का अनुभव नहीं करता था। फिर भी कोई चीज थी जिसने मुझे वेद के सत्य की ओर, गीता के सत्य की ओर, हिंदूधर्म के सत्य की ओर आकर्षित किया। मुझे

लगा कि इस योग में कहीं पर कोई महाशक्तिशाली सत्य अवश्य होना चाहिए, वेदांत पर आधारित इस धर्म में कोई परम बलशाली सत्य अवश्य होना चाहिए। इसलिए जब मैं योग की तरफ मुड़ा और योगाभ्यास करके यह जानने का संकल्प किया कि मेरी बात सच्ची है या नहीं तो मैंने उसे इस भाव और प्रार्थना से शुरू किया, मैंने कहा, “यदि ‘तुम’ हो तो ‘तुम’ मेरे हृदय की बात जानते हो। तुम जानते हो कि मैं मुक्ति नहीं माँगता, मैं ऐसी कोई वस्तु नहीं माँगता हूँ, जो दूसरे माँगा करते हैं। मैं केवल इस राष्ट्र को ऊपर उठाने की शक्ति माँगता हूँ, मैं केवल यह माँगता हूँ कि मुझे इस देश के लोगों के लिए, जिनसे मैं प्यार करता हूँ, जीने और कर्म करने को मिले और यह प्रार्थना करता हूँ कि मैं अपना जीवन उनके लिए अर्पित कर सकूँ।... इस योगयुक्त अवस्था में मुझे दो संदेश मिले। पहला यह था, ‘मैंने तुम्हें एक कार्य सौंपा है और वह है इस राष्ट्र के उत्थान में सहायता देना।’ दूसरा संदेश आया, वह इस प्रकार था, ‘इस एक वर्ष के एकांतवास में तुम्हें कुछ दिखाया गया है, वह चीज दिखायी गई है जिसके बारे में तुम्हें संदेह था, वह है हिंदूधर्म का सत्य। इसी धर्म को मैं संसार के सामने उठा रहा हूँ, यही वह धर्म है जिसे मैंने ऋषि-मुनियों और अवतारों के द्वारा विकसित किया और पूर्ण बनाया है और अब यह धर्म अन्य राष्ट्रों में मेरा काम करने के लिए बढ़ रहा है। मैं अपनी वाणी का प्रसार करने के लिए इस राष्ट्र को उठा रहा हूँ। यही वह सनातन धर्म है, यही वह शाश्वत धर्म है वास्तव में जिसे तुम पहले तो नहीं जानते थे, किंतु जिसे अब मैंने तुम्हारे सामने प्रकट कर दिया है। तुम्हारे अंदर जो नास्तिकता थी, जो संदेह था उनका उत्तर दे दिया गया है, क्योंकि मैंने अंदर और बाहर, स्थूल और सूक्ष्म, सभी प्रमाण दे दिये हैं और उनसे तुम्हें संतोष हो गया है। जब तुम बाहर निकलो तो सदा अपने राष्ट्र को यही वाणी सुनाना कि वे सनातन धर्म के लिए उठ रहे हैं, वे अपने लिए नहीं अपितु संसार के लिए उठ रहे हैं। मैं उन्हें संसार की सेवा के लिए स्वतंत्रता दे रहा हूँ। अतएव जब यह कहा जाता है कि भारतवर्ष ऊपर उठेगा तो उसका अर्थ होता है सनातन धर्म ऊपर उठेगा। जब कहा जाता है कि भारतवर्ष महान् होगा तो उसका अर्थ होता है सनातन धर्म महान् होगा। जब कहा जाता है कि भारतवर्ष बढ़ेगा और फैलेगा तो इसका अर्थ होता है सनातन धर्म बढ़ेगा और संसार पर छा जाएगा। धर्म के लिए और धर्म के द्वारा ही भारत का अस्तित्व है।’ धर्म

को महिमामन्वित करने का अर्थ है राष्ट्र को महिमामन्वित करना।” (CWSA 8: pg. 9-10)

श्रीअरविन्द को प्रदान किये ये संदेश अलीपुर जेल के एकांतवास में उन्हीं भगवान् श्रीकृष्ण द्वारा प्रदान किये गये थे जो वैष्णव भक्तों के विश्वास के अनुसार लेता युग में भगवान् श्रीराम के रूप में प्रकट हुए थे और जिनकी अपार महिमा सभी आक्रमणकारियों के अथक प्रयत्नों के बाद भी इस देश के वासियों के हृदय में अमिट रही है और बढ़ रही है। ऐसे में श्रीरामजन्मभूमि मंदिर अयोध्या परिसर से सटे, श्रीअरविन्द के देहांश स्थापित, साधनालय का होना, हिन्दू मान्यता के अनुसार उस स्थान को एक दिव्य शक्तिपीठ बना देता है। यह केवल कोई दैव संयोग नहीं अपितु इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि किस प्रकार श्रीअरविन्द का कार्य श्रीराम के कार्य को समाहित करता है और उससे सर्वथा सुसंगत रहा है।

अपने ३०.९.२०२२ से कुछ समय पूर्व के अदिनांकित पत्र में श्रीचंपत राय जी, महासचिव, श्रीरामजन्मभूमि तीर्थ क्षेत्र, रामकोट, अयोध्या ने श्रीअरविन्द आश्रम ट्रस्ट, पांडिचेरी के ट्रस्टीगणों से उक्त तीर्थ क्षेत्र से सटे हुए महर्षि श्रीअरविन्द के आश्रम परिसर को प्रदान करने व उसकी एवज में एक नया आश्रम बनाने के लिए एक दूसरा वैकल्पिक सर्वोत्तम भूभाग स्वीकार करने का अनुरोध किया। इसके उत्तर में अपने ३०.९.२०२२ के पत्र (मूल अंग्रेजी भाषा में लिखे) में मैनेजिंग ट्रस्टी श्री मनोज दास गुप्ता ने, कुछ अन्य बातों के बाद, लिखा: “कुछ ऐसे विचार हैं जो श्रीअरविन्द आश्रम ट्रस्ट बोर्ड को किसी भी निर्णय पर पहुँचते समय ध्यान में रखने चाहिए।

अयोध्या में श्रीअरविन्द साधनालय के लिए भूमि १९५९ में श्रीमाताजी को दान विलेख में दानकर्ता द्वारा निर्दिष्ट स्पष्ट इरादों के साथ दान की गई थी कि इसका उपयोग कैसे किया जाना चाहिए। श्रीमाताजी ने दानकर्ता की भावनाओं की कद्र करते हुए उपहार स्वीकार किया। संपत्ति को स्वीकार करने पर, श्रीमाताजी ने कुछ साधकों को संपत्ति की देखभाल करने के लिए नियुक्त किया जिन्होंने इसे एक साधनालय के उद्देश्यों को सार्थक करने के लिए ध्यान और चिंतन के स्थान के रूप में विकसित करने के लिए अपना खून-पसीना एक

कर दिया। साधकों के प्रयासों और साधनालय (यूपी में एकमाल) के विकास को सराहते हुए, श्रीअरविंद के पवित्र देहांशों की स्थापना १९८९ में हुई। पवित्र देहांशों की उपस्थिति और साधकों की निष्ठा-समर्पण के कारण वहाँ एक गहरा आध्यात्मिक वातावरण बनाया गया है।

ट्रस्टीगण के रूप में, हम केवल ट्रस्ट की संपत्तियों के संरक्षक हैं। इसमें हमारी भूमिका बहुत स्पष्ट है कि हमें संपत्तियों को मूल उद्देश्य के लिए बनाए रखना है जिसके लिए कि संपत्तियाँ ट्रस्ट के पास निहित हैं। हमें कोई भी निर्णय लेते समय आश्रम के साधकों और भक्तों की भावनाओं को भी ध्यान में रखना होगा।

इस संबंध में, मंदिर की सीमाओं के भीतर विभिन्न गुरुओं और संतों के लिए मंदिर बनाने की आपकी योजनाओं का उल्लेख करना उचित होगा – श्री वाल्मीकि स्वामी, श्री अगस्त्य मुनि (जिन्होंने, संयोगवश, फ्रांसीसी शोधकर्ताओं के अनुसार वेदपुरी की स्थापना की थी जिसे अब पांडिचेरी के रूप में जाना जाता है) और अन्य जिनका उल्लेख किया गया था।

हमारा साधनालय, मंदिर से सटे होने के कारण, भक्तों के लिए आध्यात्मिक खोज के ही एक अन्य प्रभावी स्थान के रूप में देखा जा सकता है और जो हमें मंदिर के ही समग्र उद्देश्य और भविष्य में इसकी महिमा के विपरीत प्रतीत नहीं होता।

इन परिस्थितियों में, हम सभी ने यह महसूस किया कि श्रीअरविंद साधनालय और श्री राम जन्मभूमि मंदिर साथ-साथ बने रह सकते हैं।” (मूल अंग्रेजी पत्र का हिन्दी रूपांतर)

श्री मनोज दास गुप्ता द्वारा इस पत्र में कही सभी बातें बहुत ही उल्लेखनीय हैं और किसी भी ट्रस्ट के प्रबंधकों के सच्चे दायित्वों को श्रीअरविन्द व श्रीराम मंदिर की पूर्ण सुसंगतता के विषय में व श्रीअरविन्द आश्रम के स्पष्ट दृष्टिकोण को दर्शाती है जो एक ऐसे सत्य पर आधारित है जो समय के साथ भी बदल नहीं सकता।

श्री मनोज दास गुप्ता के उक्त पत्र के उत्तर में लिखे अपने ७.११.२०२२

के पत्र में श्री चंपत राय जी ने उनसे अपने पूर्व के निर्णय पर पुनर्विचार करने का अनुरोध किया। आश्रम ट्रस्ट से सतत संपर्क में रहने वाले विश्वस्त सूत्रों के अनुसार भीतर और बाहर दोनों ही ओर से अनेकानेक दबावों और प्रलोभनों के चलते श्रीअरविन्द आश्रम ट्रस्ट के ट्रस्टीगण इस विषय में अपने उपरोक्त सच्चे व श्रीअरविन्द के प्रति भक्ति व निष्ठा से पूर्ण निर्णय और रुख को छोड़कर अब जिस भूमि पर श्रीअरविन्द का साधनालय व उनके पवित्र देहांश स्थापित हैं उसे अन्यत्र कोई भू खण्ड व कुछ धन के बदले में श्रीराम जन्म भूमि तीर्थ क्षेत्र को हस्तांतरित करने के उद्योग में लगे हुए हैं। किस प्रकार के भीतरी व बाहरी दबावों से वशीभूत हो हमारे इन भाइयों ने इस प्रकार के विनाशकारी व निंदनीय कृत्य में सहयोग करने का मानस बना लिया है यह तो श्री मनोज दास व उनके साथी ट्रस्टी गणों को ही विदित है।

अतः सभी सनातन धर्म के प्रेमियों व सबसे बढ़कर भगवान् श्रीराम व श्रीअरविन्द के भक्तों को चाहिये कि ऐसे संकुचित व विनाशकारी कृत्य का यथासंभव विरोध करें। भारत सरकार को चाहिये कि इस प्रकार के प्रयत्नों को फलीभूत न होने दे व इस प्रकार के विचार को ही न पनपने दे। ऐसे विशेष मुहूर्त पर जबकि उनकी १५०वीं वर्षगाँठ पर हमें श्रीअरविन्द की पावन जयंती मनाने का सौभाग्य प्राप्त हो रहा है, यह बड़ा ही दुर्भाग्यपूर्ण होगा कि उनके साधनालय और समाधि के साथ किसी भी प्रकार कोई अवमानना का प्रयास किया जाए। एक ऐसे स्थान पर उनकी समाधि का स्थित होना जहाँ प्रतिदिन हजारों आगंतुक न केवल श्रीराम मंदिर की ही परिक्रमा करते हैं अपितु एक नये युग के प्रणेता श्रीअरविन्द की समाधि के दर्शन भी करते हैं, जितने कि स्वयं पांडिचेरी स्थित आश्रम में ही विशेष अवसरों को छोड़कर अन्य दिनों शायद ही आते होंगे, यह कोई आकस्मिक संयोग नहीं है अपितु भारत में रामराज्य और श्रीअरविन्द के आलोक में भारत के पुनर्जागरण का आश्वासन है। अतः इस प्रकार के संकुचित व विभाजनकारी कृत्यों में न उलझकर चलो हम सब श्रीमाँ के इन शब्दों को दोहराएँ कि :

“आओ हम सब मिलकर भारत की महानता के लिए कार्य करें।”

अयोध्या में श्रीअरविंद साधनालय और बाबाजी श्री रामकृष्ण दासजी महाराज

९ सितंबर १९५९ को, अमावाँ की श्रीमती रानी भुवनेश्वरी कुअर पत्नी श्रीमान् राजा बहादुर हरिहर प्रसाद नारायण सिंह ने अपनी भक्ति, प्रेम और स्नेह के कारण श्रीअरविंद आश्रम, पांडिचेरी की श्रीमाताजी को अयोध्या में श्रीअरविन्द और श्रीमाताजी के कार्य के प्रचार-प्रसार हेतु ३ एकड़ भूमि का एक भूभाग उपहार में दिया। वर्ष १९५९ से १९८६ तक स्वर्गीय बाबाजी श्री रामकृष्ण दासजी ने इस भूमि की देखभाल और रखरखाव किया, जिन्हें श्री हनुमान मंदिर के निर्माण और श्रीअरविन्द के पवित्र देहांशों को स्थापित करने के लिए समाधि बनवाने की प्रेरणा प्राप्त हुई। श्रीअरविन्द के पवित्र देहांश २९ मार्च १९८९ को स्थापित किये गये। वर्ष १९८६ से २०१३ तक श्रीमाताजी की ही कृपा से श्री शिव कुमार खेतान ने श्रीअरविन्द के पवित्र देहांशों की स्थापना के समय आने वाले भक्तों के ठहरने आदि के लिए एक अतिथि गृह के निर्माण के साथ ही साथ साधनालय में आवश्यक निर्माण करवाने के कार्य को पूरा करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। वर्ष १९८६ के बाद से श्री शिव कुमार खेतान ने सभी आवश्यक संसाधनों की व्यवस्था का और अयोध्या केंद्र के वास्तविक विकास और प्रबंधन का कार्यभार वर्ष २०१३ में तब तक संभाला जब तब कि श्रीअरविन्द आश्रम ट्रस्ट पुदुच्चेरी ने सीधे ही केंद्र की देखभाल करना शुरू नहीं कर दिया।

बाबाजी श्री रामकृष्ण दासजी के विषय में बोलते हुए पद्म भूषण प्रोफेसर मनोज दास ने कहा: “वे कई मायनों में असाधारण थे। उनका जन्म १४ अगस्त १९०८ को उड़ीसा के रायरपुर नामक एक गाँव में हुआ जो कि अब जगतसिंहपुर जिले में है। परिस्थितियाँ ऐसी थीं कि वे सोलह वर्ष की आयु में सरकार के निपटान विभाग में नौकरी करने के लिए बाध्य हुए। लेकिन आंतरिक रूप से वे तब से ही आध्यात्मिक विषयों में तल्लीन हो गए थे जब से

वे पढ़ने में सक्षम हुए थे। एक दिन उन्होंने अपने परिवेश को अलविदा कह दिया और अपनी साधना के लिए एक मार्गदर्शक की तलाश में, पवित्र शहर अयोध्या पहुँचे और एक प्रसिद्ध गुरु द्वारा उन्हें शिष्य के रूप में स्वीकार किया गया। संभवतः इसी समय परंपरा के अनुसार उनका मूल नाम कृष्णचंद्र राउते बदल कर रामकृष्ण दास हुआ, जो कि पुरानी पारंपरिक पहचान के अंत और एक नए जीवन की शुरुआत का सूचक है।

यद्यपि उनमें कभी गुरु बनने की लालसा नहीं थी, तो भी उनके सभी से मिलनसार व्यक्तित्व और बिल्कुल स्पष्ट दिखाई देती श्रद्धा से आकृष्ट होकर जिज्ञासु और पिपासु जन शीघ्र ही उनकी ओर खिंचे चले आए। इनमें प्रसिद्ध राजवंशीय जन, न्यायाधीश और शिक्षाविद् शामिल थे। यद्यपि इन लोगों की प्रकाश की खोज में वे स्वयं भारी रूप से सहायक सिद्ध हुए, परंतु उनकी अपनी खोज उन सबसे भी तृप्त नहीं हुई जिन्हें हम आध्यात्मिक वास्तविकता के उदात्त स्तर मानते हैं। श्री रामकृष्ण दास – जिनके लिए कोई बड़ी बात नहीं थी कि वे शिष्यों की नित्य बढ़ती मंडली के मुखिया बन सकते थे – का यही धन्य और दुर्लभ गुण था जिसने मूल कृतियों के माध्यम से या फिर उनके विषय में कुछ प्रामाणिक लेखों के माध्यम से श्रीअरविन्द और श्रीमाँ के जगत् से उनका (श्रीरामकृष्ण दास का) परिचय कराया। उनकी परिपक्व अंतरात्मा को उनमें उस परम को पहचानने में देर नहीं लगी जिसकी वे खोज कर रहे थे। अतः जरा भी हिचकिचाए बिना वे अयोध्या में अपने आश्रम को छोड़कर पांडिचेरी चले गए और २ फरवरी १९४५ को आश्रम में शामिल हो गए।

...जैसे-जैसे समय बीतता गया, उनके पुराने प्रशंसक उन्हें खोजते-खोजते उनके नए निवास स्थान तक पहुँच गए। इनमें अमावाँ रियासत के राजा और रानी भी थे। जब बाबाजी महाराज अयोध्या में थे, तो उन्होंने उन्हें अद्वितीय पुरातनता वाले शहर, राम जन्मभूमि या भगवान् राम के पवित्र जन्मस्थान के सबसे प्रसिद्ध स्थान के निकट एक बड़े भूभाग का एक अनमोल उपहार भेंट

किया था। अब शाही युगल अपने संकल्प को पूरा करने के लिए उत्सुक था। बाबाजी ने उन्हें वह भूमि श्रीमाताजी को अर्पण करने की सलाह दी, जिसे उन्होंने सहर्ष पूरा किया। श्रीमाताजी ने उस भेंट को सहर्ष स्वीकार कर लिया।

हम कल्पना कर सकते हैं वैराग्य-उन्मुख आध्यात्मिकता के पारंपरिक विचारों में डूबे हुए और अनेकों लोगों के लिए आध्यात्मिक संरक्षक की भूमिका निभाने वाले व्यक्ति के लिए श्रीअरविन्द आश्रम के इतने सारे अन्य साधकों के साथ ही एक साधक के रूप में शामिल होकर, श्रीमाँ को परमोच्च मार्गदर्शक के रूप में स्वीकार करते हुए उनके द्वारा चुने गए किसी भी क्षेत्र में अपनी सेवाएँ प्रदान करने और एक मूलभूत रूप से भिन्न जीवन शैली को स्वीकार करने की कठिनाई को। आश्रम जीवन के अपने अधिकांश समय में बाबाजी या बाबाजी महाराज, जैसा कि उन्हें प्यार से बुलाया जाने लगा था, आश्रम के भोजनालय में बर्तन धोने का कार्य करते थे। शारीरिक शिक्षा के वर्ग के एक सदस्य के रूप में उसके नियमित कार्यक्रम में वे शायद ही कभी अनुपस्थित रहे हों। अनुशासन का गहरा बोध और समय के सदुपयोग पर गहरी पकड़ रखने के साथ-साथ वे अध्ययन, लेखन, और आगंतुकों के सवालों और पत्तों, जिनकी संख्या नित्य बढ़ती ही जाती थी, के उत्तर देने में समर्पित भाव से लगे रहते थे...”



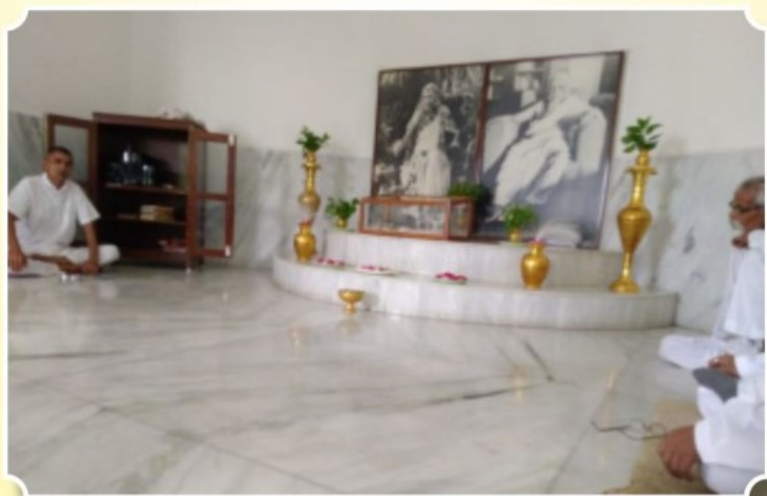
Babaji Sri Ramkrushna Dasji



Sri Hanuman Temple at Sadhanalaya



Bookshop at Sadhanalaya



Meditation Hall



Sri Arvind Sadhanalaya at Sri Ayodhya and Sri Ram Janmabhoomi Teerth Kshetra

This year the 75th year of Indian Independence – ‘Azadi Ka Amritmahotsav’ – is being celebrated along with the 150th anniversary of Sri Aurobindo’s birth. The Government of India has been earnest in its unprecedented efforts to pay homage to Sri Aurobindo on this occasion. To begin with, Prime Minister Shri Narendra Modi constituted a 53-member high-level committee to oversee the various programmes and events being organised for this purpose in India and abroad. As part of this ongoing celebration, the Ministry of Culture arranged, in the Republic Day parade of 2022, a float highlighting Sri Aurobindo’s life and work. In addition, a memorial postal stamp and a 150 Rupee coin were released by the Prime Minister Shri Narendra Modi himself. Also, a three-volume collection of Sri Aurobindo’s and the Mother’s writings along with one volume from their writings entitled “The Greatness of Indian culture and Sanatana Dharma” were financed and distributed by the Ministry of Culture through the Sri Aurobindo Divine Life Trust, Jhunjhunu. To specially emphasise and widely spread the vision of Sri Aurobindo, the Prime Minister and Home Minister gave speeches and the Ministry of Culture organised wide ranging events with a view to spread wide Sri Aurobindo’s philosophy. It is an undeniable fact that without understanding Sri Aurobindo, it is not possible to well-understand India and its soul and her past, present and future work. This is elucidated by the following statement of the Mother on the occasion of Sri Aurobindo’s birth centenary.

“...this Centenary [of Sri Aurobindo, in 1972] has come ON PURPOSE. It’s certainly something that’s coming now because the ONLY salvation for the country, the ONLY thing that can unify it, is for it to adopt Sri Aurobindo’s ideal for the country — he had a plan, he very clearly saw how the country should be organized, he said it to me. It’s there, if one reads his books seriously, one can see it. So I said that things should be so organized that THROUGHOUT India there should be study groups, libraries, lectures, anything whatever, so the whole country should know Sri Aurobindo’s thought and will. And the Centenary is an excellent opportunity. ...This Centenary should be organized right now, at once, like something covering the whole country on the occasion of the Centenary.... And in what Sri Aurobindo wrote, they will find all they need to organize the country...” (Mother’s Agenda, Vol 11, page 207)

According to the Mother, Sri Aurobindo brought an affirmation of a splendid future for earth. “What Sri Aurobindo represents in the world’s history is not a teaching, not even a revelation; it is a decisive action direct from the Supreme.” (CWM, Vol. 13, page 4)

In light of this passage we can say that Sri Aurobindo and his work are truly all-encompassing – synthesizing all things, creatures, peoples, castes, religions, sects, feelings and thoughts – while not being limited by any or all of them. In the words of Sri Aurobindo, “Philosophies & religions dispute about the priority of different aspects of God & different Yogins, Rishis & Saints have preferred this or that philosophy or religion. Our business is not to dispute about any of them, but to realise & become all of them, not to follow after any aspect to the exclusion of the rest, but to

embrace God in all His aspects and beyond aspect.” (CWSA 12, page 99)

This is further clarified by the Mother’s statement

“This said, our position is clear.

We do not fight against any creed, any religion.

We do not fight against any form of government.

We do not fight against any social class.

We do not fight against any nation or civilisation.

We are fighting division, unconsciousness, ignorance, inertia and falsehood.

We are endeavouring to establish upon earth union, knowledge, consciousness, Truth, and we fight whatever opposes the advent of this new creation of Light, Peace, Truth and Love.” (CWM Vol. 13, page 124-25)

In the year 1989, the Chief Minister and the Government of Uttar Pradesh welcomed the arrival of the Relics of Sri Aurobindo with great enthusiasm when the Relics were enshrined at Sri Arvind Sadhanalaya in Ayodhya by Sri Ramakrushnadas Babaji. The Grace of the Mother and the stamp of approval of Sri Rama for this Sadhanalaya are evidenced by the fact that, after the events of 1992, when the Central Government acquired the majority of the land around the Sri Rama Temple, this Sadhanalaya was deliberately exempted by the then Narsimha Rao Government. An intimate disciple of Sri Aurobindo, Shri Nirodbaran writes about the Relics : “We have seen how much importance She (The Mother) attached to it... She has said that each and every molecule of Sri Aurobindo’s body was filled with Supramental Consciousness. We know that

his body was glowing with Supramental Light as soon as he left it. That Consciousness is not a mortal thing which ceases with the death of the physical body. If that were so, then we wouldn't feel such extraordinary power and strength when we touch the Samadhi.

We have seen the peace and tranquility that dwell wherever the Relics are enshrined. Therefore, the Relics are not a mere memento. Relics are the living Presence of Sri Aurobindo, imbued with the light and force of his lifelong sadhana, just as an atom contains an infinite power in itself – this is the truth behind the Relics. To always keep alive that truth and give due respect to it is what the Relics demand of us.” (Nirodbaran, Divinity's Comrade, Relics, p. 216-17)

What an ironical travesty it is that during this year of the 75th Anniversary of India's Independence – which was granted on Sri Aurobindo's birthday as a sanction of his work by Sri Krishna – which is being celebrated by the Government of India along with the 150th anniversary of Sri Aurobindo's birth, the members of Sri Ram Mandir Teerth Kshetra Ayodhya are trying to relocate the Sri Arvind Sadhanalaya located there and remove the Divine Relics of Sri Aurobindo enshrined there and thus by showing – to put it very mildly – a disrespect for Sri Aurobindo, are causing deep anguish to his innumerable devotees.

The devotees of Sri Aurobindo would like to believe that such a move is actuated not by any malice but merely by a certain narrowness and the lack of a true understanding of Sri Aurobindo and his divine work. Therefore, it seems necessary to bring to light certain aspects of Sri Aurobindo and his divine work and message.

Sri Aurobindo has given the message of a divine life

for humanity. According to him the descent of divine Life on earth is inevitable and there will be the end of death and ignorance on earth. This will be accomplished by the descent and growth of the Supramental consciousness on earth. Man is not the last step in the manifestation of the Divine on earth. The next step of this manifestation will be the Supramental or the Divine man whose consciousness, because of its identification with the Divine Consciousness, will manifest (within its limits) its omnipotence, omniscience and omnipresence. Superman will be to man what man is to the animal. But, while the animal cannot – by any of its own efforts – acquire the human consciousness, it is possible for man by an opening and surrender to the divine Grace to arrive at the Supramental consciousness. According to Sri Aurobindo, this has been the secret behind all human spiritual efforts (tapasya, meditation, Yoga, etc.). All these efforts reach their culmination in the Supramental consciousness. This has been, all along, the real work of all our Rishis and Avatars. According to Sri Aurobindo, Sri Krishna used the Overmind consciousness – a level of consciousness below the Supramental consciousness but the highest layer of the mental consciousness – during his Avataric life and Lila on earth. As we shall see when we proceed further, it was Sri Krishna (who is a permanent incarnation of the Supreme Lord) who impelled Sri Aurobindo to leave the freedom movement and move to Puducherry to pursue the sadhana of the Supramental Yoga. After sixteen years of sadhana, Sri Krishna descended, on the urging of the Mother, into Sri Aurobindo's physical body on the 24th November, 1926. This day is celebrated as "Siddhi Divas" and also as the foundation day of Sri Aurobindo Ashram, Puducherry because on this day Sri Aurobindo (joined with Sri Krishna)

withdrew to pursue a most rigorous sadhana for the descent of the Supramental consciousness on earth and the Mother took charge of the running of the Ashram. The momentous efforts of Sri Aurobindo and the Mother led to the descent of the Supramental Consciousness on 29.2.1956 in the subtle physical – the first step in the descent of the Supramental World on earth.

Sri Aurobindo has told us that the unity of mankind and, ultimately, the formation of a world government is necessary in order that the human race does not perish before the arrival of the Supramental and that India and its Sanatana Dharma have a crucial role to play in this work. According to Sri Aurobindo, if India loses its great spiritual and cultural heritage and imitates the West, then not only India but the whole world would perish along with it. Therefore, in his articles written in the *Bande Mataram*, *Karmayogin* and *Arya*, he revealed the glorious past of India and (despite the difficulties of the present) assured us of its magnificent future. Not only this, in more than ten volumes of his writings, he has taken to their true and noble heights the Vedas, Upanishads, Indian religion, Culture, art, polity and life which had been systematically demeaned during the 1000 years of slavery to the invading barbaric hordes and their Indian apologists. So much could be accomplished through the medium of one body only, because as we have expressed earlier in the words of the Mother that, Sri Aurobindo has verily expressed in his life and work a direct and decisive action of the Supreme.

Sri Aurobindo's contribution and role in the freedom movement of India is well-known. Now for a glimpse of the true secrets of Indian culture, its destiny, and Sanatana

Dharma we present a few excerpts from his writings.

“The world moves through an indispensable interregnum of free thought and materialism to a new synthesis of religious thought and experience, a new religious world-life free from intolerance, yet full of faith and fervour, accepting all forms of religion because it has an unshakable faith in the One. The religion which embraces Science and faith, Theism, Christianity, Mahomedanism and Buddhism and yet is none of these, is that to which the World-Spirit moves. In our own, which is the most sceptical and the most believing of all, the most sceptical because it has questioned and experimented the most, the most believing because it has the deepest experience and the most varied and positive spiritual knowledge, – that wider Hinduism which is not a dogma or combination of dogmas but a law of life, which is not a social framework but the spirit of a past and future social evolution, which rejects nothing but insists on testing and experiencing everything and when tested and experienced turning it to the soul’s uses, in this Hinduism we find the basis of the future world-religion. This sanatana dharma has many scriptures, Veda, Vedanta, Gita, Upanishad, Darshana, Purana, Tantra, nor could it reject the Bible or the Koran; but its real, most authoritative scripture is in the heart in which the Eternal has His dwelling. It is in our inner spiritual experiences that we shall find the proof and source of the world’s Scriptures, the law of knowledge, love and conduct, the basis and inspiration of Karmayoga.” (CWSA 8, pg. 26)

In his Uttarpara speech delivered soon after his release from the Alipore Jail, Sri Aurobindo says, “I say no longer that nationalism is a creed, a religion, a faith; I say that it

is the Sanatana Dharma which for us is nationalism. This Hindu nation was born with the Sanatana Dharma, with it it moves and with it it grows. When the Sanatana Dharma declines, then the nation declines, and if the Sanatana Dharma were capable of perishing, with the Sanatana Dharma it would perish. The Sanatana Dharma, that is nationalism.” (CWSA 8: 12)

“We speak often of the Hindu religion, of the Sanatana Dharma, but few of us really know what that religion is. Other religions are preponderatingly religions of faith and profession, but the Sanatana Dharma is life itself; it is a thing that has not so much to be believed as lived. This is the dharma that for the salvation of humanity was cherished in the seclusion of this peninsula from of old. It is to give this religion that India is rising. **She does not rise as other countries do, for self or when she is strong, to trample on the weak. She is rising to shed the eternal light entrusted to her over the world. India has always existed for humanity and not for herself and it is for humanity and not for herself that she must be great.**” (CWSA 8: 5-6)

“When I approached God at that time, I hardly had a living faith in Him. The agnostic was in me, the atheist was in me, the sceptic was in me and I was not absolutely sure that there was a God at all. I did not feel His presence. Yet something drew me to the truth of the Vedas, the truth of the Gita, the truth of the Hindu religion. I felt there must be a mighty truth somewhere in this Yoga, a mighty truth in this religion based on the Vedanta. So when I turned to the Yoga and resolved to practise it and find out if my idea was right, I did it in this spirit and with this prayer to Him, **“If Thou art, then Thou knowest my heart. Thou knowest**

that I do not ask for Mukti, I do not ask for anything which others ask for. I ask only for strength to uplift this nation, I ask only to be allowed to live and work for this people whom I love and to whom I pray that I may devote my life.” I strove long for the realisation of Yoga and at last to some extent I had it, but in what I most desired, I was not satisfied. Then in the seclusion of the jail, of the solitary cell I asked for it again. I said, “Give me Thy adesh. I do not know what work to do or how to do it. Give me a message.” In the communion of Yoga two messages came. The first message said, “I have given you a work and it is to help to uplift this nation. Before long the time will come when you will have to go out of jail; for it is not my will that this time either you should be convicted or that you should pass the time as others have to do, in suffering for their country. I have called you to work, and that is the adesh for which you have asked. I give you the adesh to go forth and do my work.” The second message came and it said, “Something has been shown to you in this year of seclusion, something about which you had your doubts and it is the truth of the Hindu religion. It is this religion that I am raising up before the world, it is this that I have perfected and developed through the rishis, saints and avatars, and now it is going forth to do my work among the nations. I am raising up this nation to send forth my word. This is the Sanatana Dharma, this is the eternal religion which you did not really know before, but which I have now revealed to you. The agnostic and the sceptic in you have been answered, for I have given you proofs within and without you, physical and subjective, which have satisfied you. When you go forth, speak to your nation always this word that it is for the Sanatana Dharma that they arise, it is for the world and not for themselves that

they arise. I am giving them freedom for the service of the world. When therefore it is said that India shall rise, it is the Sanatana Dharma that shall rise. When it is said that India shall be great, it is the Sanatana Dharma that shall be great. When it is said that India shall expand and extend herself, it is the Sanatana Dharma that shall expand and extend itself over the world. It is for the dharma and by the dharma that India exists. To magnify the religion means to magnify the country.” (CWSA 8: 9-10)

These messages were given to Sri Aurobindo in the solitary confinement of Alipore Jail by the same Bhagawan Sri Krishna who, according to the belief of Vaishnava devotees, appeared in the form of Bhagawan Sri Rama in the Treta Yuga, and whose immeasurable glory, despite all efforts of foreign aggressors, has remained indelibly stamped in the hearts and minds of the people of this country and keeps ever growing. Thus, it could not be a mere divine coincidence that a Sadhanalaya, with Sri Aurobindo’s Sacred relics enshrined there, is located adjacent to the Sri Ram Janmabhoomi Temple, Ayodhya. This makes this place not only a divine Shaktipeeth according to Hindu belief but also – for those conscious of Sri Aurobindo’s work – a concrete proof of the consonance of Sri Rama’s work with Sri Aurobindo’s.

In his undated letter, written sometime before 30.9.2022, Sri Champat Rai ji, General Secretary, Shri Ram Janmabhoomi Teerth Kshetra, Ramkot, Ayodhya requested the Trustees of Sri Aurobindo Ashram Trust, Pondicherry to provide Maharshi Sri Aurobindo’s ashram complex adjacent to the said Teerth Kshetra and in lieu of that to accept an alternative best site for building a new Ashram. In reply to

this, in his letter dated 30.9.2022, Sri Manoj Das Gupta, the Managing Trustee, inter alia, wrote: “There are certain considerations that the Sri Aurobindo Ashram Trust board must keep in mind when arriving at any decision.

The land for the Sri Aurobindo Sadhanalaya in Ayodhya was donated to the Mother in 1959 with clear intentions on how it should be used specified by the donor in the gift deed. The Mother gracefully accepted the gift appreciating the sentiments of the donor. On accepting the property, the Mother assigned some sadhaks to take care of the property and they took great pains to develop it as an abode for meditation and introspection befitting the purpose of a Sadhanalaya. Recognising the efforts of the sadhaks and the growth of the Sadhanalaya (the only one in UP), the enshrinement of the Sacred Relics of Sri Aurobindo took place in 1989. Due to the presence of the Sacred Relics and the dedication of the sadhaks, a noticeable spiritual ambience has been created.

As Trustees, we are only custodians of the Trust properties. Our role is very clear in that we have to maintain the properties for the original purpose for which the properties vested with the Trust. We also have to take into consideration the feelings of the inmates and devotees while making any decision.

In this regard, it would be pertinent to refer to your plans to have shrines for various Gurus and Sages within the Mandir boundaries – Sri Valmiki Swami, Sri Agastya Muni (who, incidentally, according to French researchers had established Vedapuri at what is now known as Pondicherry) and others which was mentioned.

Our Sadhanalaya, being adjacent to the Mandir, may

effectively be seen as another place for spiritual pursuit for devotees and does not appear to us to be contrary to the overall purpose of the Mandir and its glory in future.

In these circumstances, it was felt by all of us that Sri Aurobindo Sadhanalaya and the Shri Ram Janmabhoomi Mandir can co-exist.”

All the things pointed out in this letter by Sri Manoj Das Gupta are noteworthy and give a perspective on the true attitude of the trustees of a trust and also clear the stand of Sri Aurobindo Ashram Trust on this matter and bring out in the open its view of the existence of an essential harmony between Sri Aurobindo and Sri Ram Mandir. This view is based on a Truth that does not change with time.

In response to Sri Manoj Das Gupta’s above letter, Sri Champatrai wrote back on 7.11.2022 requesting him to reconsider his position. According to reliable sources in close contact with Ashram Trust, in the face of both internal and external pressures, the Ashram Trustees, abandoning their original stand based upon devotion and loyalty to Sri Aurobindo are endeavouring to exchange the plot of land on which Sri Arvind Sadhanalaya is established and Sri Aurobindo’s sacred relics are installed for some other land and money. Under what kinds of internal and external pressures these brothers of ours have consented to go along with such a destructive and reprehensible act is known only to Sri Manoj Das and his fellow trustees.

It behoves all friends of Sanatana Dharma and above all, the devotees of Sri Ram and Sri Aurobindo to do all in their power to oppose this narrow and destructive endeavour. It is for the Government of India to see that such efforts do not succeed and therefore nip any such intentions

in the bud. At such an opportune moment when we have the splendid privilege of celebrating the 150th birth anniversary of Sri Aurobindo, it would be very unfortunate that any such attempt of disrespect to his Sadhanalaya and Samadhi is made. His sacred Relics being enshrined at a place where on a daily basis, thousands of pilgrims visit – as opposed to the number of visitors even at the Ashram at Pondicherry itself where, except on some special occasions, hardly does it ever reach that point – and not only pay respects at Sri Ram Mandir but also to the herald of the New Age, Sri Aurobindo, is not just a happy coincidence but the assurance of Ram Rajya and the renaissance of India in the light of Sri Aurobindo. Therefore, without indulging in such narrow and divisive endeavours, let us join the Mother and repeat her words,

“Let us all work for the greatness of India.”

Sri Arvind Sadhanalaya at Ayodhya and Babaji Sri Ramkrushna Dasji Maharaj

On 9th September 1959, a piece of 3 Acre Land was gifted by Shrimati Rani Bhuvaneshwari Kuer W/o Shriman Raja Bahadur Harihar Prasad Narayan Singh of Amawan, out of her devotion, love and affection, to The Mother of Sri Aurobindo Ashram, Pondicherry for the propagation of the work of Sri Aurobindo and the Mother in Ayodhya. From the year 1959 to 1986 the land was being taken care of and maintained by Late Babaji Sri Ramkrushna Dasji who got the inspiration for the construction of Sri Hanuman temple and a shrine to house the sacred relics of Sri Aurobindo which were installed on March 29, 1989. From the year 1986 to 2013 Shri Shiv Kumar Khetan was instrumental in carrying out the work of building the necessary structures along with a guest house to accommodate the devotees expected to come at the time of the installation of Sri Aurobindo's sacred Relics. It was from the year 1986 onwards that Sri Shiv Kumar Khetan arranged, by the Grace of the Mother, all the needed resources and supervised the actual development and management of the Ayodhya Centre till sometime in the year 2013 when the Sri Aurobindo Ashram Trust Puducherry began to look after the Centre directly.

Speaking about Babaji Sri Ramkrushna Dasji Padma Bhushan Prof. Manoj Das said : "He was extraordinary in several ways. Born on the 14th of August 1908, in a village named Rairpur in what is now Jagatsinghpur district of Orissa, circumstances obliged him to take up a job in the

Settlement Department of the Government at the age of sixteen. But inwardly he remained engrossed in the spiritual lore right from the time he had been able to read. One day he bade goodbye to his milieu and, in search of a guide for his Sadhana, reached the holy city of Ayodhya and was accepted as a disciple by a renowned Guru. Probably it was at this time that his original name, Krushnachandra Routray, changed into Ramakrushna Das, as demanded by tradition, indicating the end of one's old conventional identity and the beginning of a new life...

Before long, even though he never wished to be a Guru, seekers, attracted by his most amiable personality and transparent faith, were drawn to him. Among them were princes, judges and educationists of eminence. While he became a great support in their search for light, his own quest never stopped even with what we believe to be realisations of lofty planes of mystic reality. It is this blessed and rare quality of Ramakrushna Das — who could have easily presided over an ever-growing circle of disciples — that introduced him to the world of Sri Aurobindo and the Mother, either through some of their works or through some authentic articles on them. It did not take his mature psyche long to recognise in them the ultimate he sought. Without the slightest hesitation he broke away from his hermitage and came over to Pondicherry and joined the Ashram on the 2nd of February 1945.

...As time passed, his old admirers traced him to his new abode. Among them were the Raja and Rani of the principality of Ambawa. While Babaji Maharaj was at

Ayodhya, they had offered him a precious gift of a large tract of land adjacent to the most celebrated spot in that city of unique antiquity, Ram Janmabhoomi or the sacred Birthplace of Lord Rama. Now the royal couple was keen to effectuate its resolve. Babaji advised them to offer the land to the Mother, which they happily did and the Mother graciously accepted it.

We can imagine the difficulty for one steeped in the traditional ideas of asceticism-oriented spirituality and occupying a position of mentor for numerous others, to join as one among so many sadhaks of Sri Aurobindo Ashram conforming to a radically different life-style, accepting the Mother as the supreme Guide and offering one's services in any field chosen by Her. For the greater part of his life in the Ashram, Babaji or Babaji Maharaj as he came to be lovingly called, worked in the Ashram Dining establishment, washing dishes. He rarely absented himself from the regular programme of physical education as a member of his group. But, with a keen sense of discipline and an exemplary hold over time, he devoted himself to study, writing, answering questions from visitors whose number kept growing, and replying to a bulging volume of letters..."



Please use this link or QR code to sign petition to Save Sri Aurobindo's Relics Centre at Ayodhya
<https://www.change.org/SaveSriAurobindoRelicsCentreAyodhya>



Sri Aurobindo's Relics Samadhi